ISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 2, Issue 02, May 2019

पंचायती राज व्यवस्था और भारत में ग्रामीण विकास

[1]डॉ0 अनुपमा श्रीवास्तव

[1]एसो0 प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान विभाग, ज0ला0ने0मेमो0परा0 महाविद्यालय, बाराबंकी (उ0प्र0)

Received: 08 May 2019, Accepted: 11 May 2019 ; Published on line: 15 May 2019

Abstract

प्रस्तुत शोध पत्र में देश व समाज के विकास में पंचायत की भूमिका का विश्लेषण किया गया है। पंचायतों का अस्तित्व देश के अतीत में था, वर्तमान में है और भविष्य में रहेगा। चूंकि पंचायत लोकतंत्र एवं विकास की पहली सीढ़ी है। अतः भविष्य में पंचायत थे और उन्हें और अधिक सदृढ़ बनाना होगा। शताब्दियों से सहज रूप से एक महत्वपूर्ण जीवन पद्धति के रूप में विद्यमान हैं। इस जीवन पद्धति के द्वारा भारतीय ग्रामीण समाज सर्वोच्च उपलब्धियां हासिल कर रहा है। भविष्य की पंचायत और सशक्त बनानी होगी। जिससे विकास की गति और तेज हो सके। पंचायती राजव्यवस्था ने हर वर्ग को हिस्सेदारी दिलाते हुए लोकतंत्र की असली तस्वीर दिखाई है। विकास किसी भी स्तर का हो, उसमें किसी न किसी रूप में पंचायत के बिना ग्रामीण विकास की कल्पना नहीं की जा सकती है क्योंकि अभी भी भारत में अधिकांश आबादी गांवों में रहती है। और गांवों के विकास की पहली सीढ़ी पंचायत है।

शब्द संक्षेप– ग्रामीण विकास, पंचायती राजव्यवस्था, जनसहभागीता द्विस्तरीय ढांचा, सामुदायिक विकास, 73वां संविधान सं शोधन।

Introduction

महात्मा गांधी जी ने देश की पंचायतों के महत्व पर बात करते हुये उचित ही कहा था, ''सच्चा लोकतंत्र वही है, जो निचले स्तर पर लोगों की भागीदारी पर आधारित हो। यह तभी सम्भव है, जब गांव में रहने वाले आम आदमी को भी षासन के बारे में फैसला करने का अधिकार मिले।''

अतीत से लेकर वर्तमान तक पंचायती राज व्यवस्था का विकास–

माना जाता है जब मानव जाति की उत्पत्ति हुई होगी, तो कुनबे बने होंगे। इन कुनबों का मुखिया भी किसी न किसी को चुना गया होगा। लोगों के बीच प्रेम के साथ ही असहयोग एवं बेईमानी ने भी स्थान बनाया होगा। फिर संघर्ष की नौबत आयी होगी और इस संघर्ष से निपटने के लिये एवं ऐसी समस्या के समाधान के लिए ही मुखिया का अस्तित्व बढ़ा होगा। चूंकि प्रथम दृष्टया पंचायत का मतलब था कि पांच वृद्ध और बुद्धिमान लोगों की ऐसी कमेटी, जो दोनों पक्षों की समस्याओं का किसी पक्षपात के बिना निस्तारण कर सके। समय के साथ उसके स्वरूप में परिवर्तन हुआ। इतिहास के

ISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 2, Issue 02, May 2019

दृष्टिकोण से देखें, तो पंचायत का जिक्र ऋग्वेद में भी मिलता है। माना जाता है कि ऋग्वेद में प्रयुक्त हुआ शब्द ग्रामीण ही पंच है। रामायण में गणराज्य एवं संघों का जिक्र मिलता है। इस काल में पंचायते ग्रामीण जीवन के संरक्षण के साथ ही राज्य तक हस्तक्षेप करती थी। इसी तरह महाभारत काल में सभापर्व का जिक्र मिलता है। एक जगह देवर्शि नारद युधिष्ठिर से पूछते हैं कि क्या आपके गांव के पंच लोग कर वसूलने में राजा का सहयोग कर रहे हैं। मध्यकाल में कौटिल्य के अर्थशास्त्र से यह जानकारी मिलती है कि मौर्यकालीन व्यवस्था में ग्रामीण जीवन की महत्वपूर्ण भूमिका थी। इसी प्रकार गुप्तकाल व हर्षवर्धन काल में भी पंचायत का जिक्र है। यहां तक कि चीनी यात्री हवेनसांग ने भी अपने यात्रा वृत्तान्त में ग्राम्य जीवन का जिक्र करते हुए पंचायत की बात कही है। मुगलकालीन शासन में भी पंचायतों का महत्वपूर्ण स्थान दिया गया था।[3]

ब्रिटिश काल में ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने पहले कलकत्ता में पैर जमाया। इसके बाद धीरे–धीरे पूरे भारत में अपना जाल फैलाया और अंग्रेजी शासकों ने छोटे–छोटे रियासतदारों को उकसाया और उन्हें कर वसूलने का अधिकार दे दिया। ये ठिकानेदार बाकायदार राजदरबार लगाते थे। इनके दरबार में भी पंच थे। कुछ ठिकानों की ओर से हर गांव में पंच मनोनीत कर दिया गया था। किसी भी प्रकार का संघर्ष होने पर ये पंच ही मामले को रफा–दफा करवाते थे। यह अलग बात है, जिस पक्ष की ओर पंचों का रूझान अधिक होता था, फैसला उसी के पक्ष में होता है। इससे कई बार पीड़ित पक्ष को ही दण्ड सहना पड़ता था। पंचायतों को नियन्त्रित करने के लिये अंग्रेजी शासकों ने 1860 ई0 में सोसाइटी रजिस्ट्रेशन एक्ट बनाया।[4] सन् 1870 ई0 में लार्ड मियो गवर्नर जनरल ने स्थानीय शासन के नाम पर पंचायतों को नये सिरे से विकसित करने का प्रस्ताव रखा। वर्ष 1982 ई0 में लार्ड रिपन ने इन प्रस्तावों का अध्ययन करने के बाद लोकल सेल्फ गवर्नमेण्ट को मंजूरी तो दी, लेकिन यह गवर्नमेण्ट प्रभावी नहीं हो पायी। वर्श 1884 में मद्रास एवं बंगाल में यूनियन पंचायतों के गठन के सम्बंध में कार्यवाही का एक उल्लेखनीय प्रयास था। 19वीं सदी के उत्तरार्द्ध में दादा भाई नैरोजी, सुरेन्द्रनाथ बनर्जी, बालगंगाधर तिलक, लाला लाजपत राय, विपिनचन्द्र पाल, रविन्द्रनाथ ठाकुर आदि नेताओं में ग्रामीण जनता को उसकी प्राचीन ग्राम पंचायतों तथा आत्मनिर्भर ग्रामीण समाज व्यवस्था की याद दिलाई। वर्श 1907 ई0 में शाही आयोग का गठन किया गया, जिसने देशभर में घूमकर पंचायतों की स्थापना का सुझाव दिया। वर्श 1920 ई0 में मद्रास प्रान्त में पंचायत कानून बना। इसने स्थानीय संस्थाओं और पंचायतों को अधिकार दे दिये। वर्श 1935 में प्रान्तों को स्वायत्तता मिली। सन्

ISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 2, Issue 02, May 2019

1941 ई0 में पंचायतों के लिये अलग से विधान बनाने का एक दस्तावेज तैयार हुआ 1946 ई0 में जाकर ग्राम पंचायत अधिनियम बना।[5] समय–समय पर विभिन्न प्रान्तों के लिये ग्राम पंचायत सम्बन्धी जो अधिनियम पारित किये गये, वे इस प्रकार हैं–

बंगाल में स्थानीय अधिनियम 1919, मद्रास में स्थानीय सरकार अधिनियम 1920, बम्बई पंचायत अधिनियम 1920, उत्तर प्रदेश पंचायत एक्ट 1920, बिहार सरकार अधिनियम अ 1920, सेन्ट्रल प्रोविन्स पंचायत अधिनियम अ 1920, पंजाब पंचायत अधिनियम 1922, असम स्वसरकार अधिनियम 1925, मैसूर ग्राम पंचायत अधिनियम 1928। इसके पश्चात् स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् वर्ष 1957 ई0 में सामुदायकि विकास कार्यक्रमों को सफल बनाने के लिये जनसहभागिता की समस्या के समाधान के सम्बंध में अध्ययन करके सुझाव देने के लिये बलवन्त राय मेहता की अध्यक्षता में एक समिति का गठन किया गया।[6] 2 अक्टूबर 1959 ई0 को बलवन्त राय मेहता समिति की सिफारिशों को लागू करवाने के लिये तत्कालीन प्रधानमंत्री पं0 जवाहर लाल नेहरू ने राजस्थान के नागौर जिले में पंचायती राज का उद्घाटन करते हुए एक महत्वपूर्ण कदम उठाया। इसके बाद सन् 1959 ई0 को इस व्यवस्था को लागू किया गया। अगले 3–4 वर्षों में सम्पूर्ण देश में ग्राम पंचायतों की स्थापना हो गयी। भारत में अधिकांश राज्यों में बलवन्त राय मेहता समिति की सिफारिशों को त्रिस्तरीय पंचायती राज व्यवस्था ग्राम स्तर पर ग्राम पंचायत, खण्ड स्तर पर पंचायत समिति, तथा जिला स्तर पर जिला परिषद के रूप में स्थापित कर दिया गया है।[7]

पंचायती राज व्यवस्था में सुधार–

पंचायती राज व्यवस्था में सुधार व मजबूती करने के लिये 15 मई 1989 को 64वां सविंधान सं शोधन विधेयक लाया गया। इस विधेयक के अनुसार पंचायती राज संस्थाओं का ढांचा त्रिस्तरीय होगा। ग्राम स्वर, ब्लॉक स्तर तथा जिला स्तर। छोटे राज्य, जिनकी जनसंख्या 20 लाख से कम है, वे त्रिस्तरीय ढांचा भी अपना सकते हैं। पंचायतों में महिलाओं को 30 प्रतिशत आरक्षण प्राप्त होगा यह आरक्षण अनुसूचित जाति व जनजाति के अतिरिक्त होगा। पंचायतों का कार्यकाल पांच वर्ष का होगा। यदि किसी पंचायत का निर्धारित अवधि से पूर्व विघटन हो जाता है, तो अधिकतम 6 माह के भीतर इनका नया चुनाव कराना अनिवार्य होगा। पंचायती राज संस्थाओं को अपने क्षेत्र के अन्तर्गत विकास की योजना का निर्माण करने का अधिकार होगा। यद्यपि 64वां संविधान सं शोधन विधेयक लोकसभा में तो पारित हो गया, किन्तु राज्य सभा में पारित नहीं हो सका। इसके पश्चात् 16 दिसम्बर 1991

ISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 2, Issue 02, May 2019

को पी0वी0 नरसिम्हा राव सरकार के द्वारा 72वां संविधान सं शोधन विधेयक लोकसभा में प्रस्तुत किया गया। यह विधेयक 64वें सं शोधन विधेयक की ही संशोधित प्रति थी। लोकसभा में 72वें विधेयक की समीक्षा हेतु संसद सदस्यों की एक संयुक्त प्रवर समिति का गठन किया गया। नाथूराम मिर्धा की अध्यक्षता में गठित इस समिति में विभिन्न राज्यों और इलाकों के प्रतिनिधि सदस्य थे। 22 दिसम्बर को लोकसभा, एवं अगले दिन राज्य सभा ने 17 राज्यों के अनुमोदन के बाद 24 अप्रैल 1993 ई0 को यह अधिनियम 1993 सम्पूर्ण देश के विभिन्न राज्यों में लागू किया। इस सं शोधन द्वारा संविधान में एक नया भाग, भाग–9 संविधान में जोड़ा गया, इसके द्वारा अनुच्छेद 243 में पंचायतों में संशोधन के प्रावधान किये गये हैं, जिसमें 15 उप–अनुच्छेद हैं।[8]

इस अधिनियम के अनुसार ग्राम सभा एक ऐसा निकाय होगा, जिसमें ग्राम स्तर पर पंचायत क्षेत्र में मतदाताओं के रूप में पंजीकृत सभी व्यक्ति शामिल होंगे। ग्राम सभा राज्य विधान मण्डल द्वारा निर्धारित शक्तियों का प्रयोग तथा कार्यों को सम्पन्न करेगी, जैसे– 20 लाख से अधिक जनसंख्या वाले सभी राज्यों के लिये पंचायती राज की त्रिस्तरीय प्रणाली, प्रत्येक पांच वर्श में पंचायतों के नियमित चुनाव, अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजातियों के लिये आरक्षण और महिलाओं के लिये 33 प्रतिशत आरक्षण, पंचायती राज संस्थाओं की वित्तीय शक्तियों के सम्बंध में सिफारिशें करने के लिये वित्त आयोग की स्थापना, पूरे जिले के लिये विकास योजना मसौदा बनाने के लिये जिला आयोजन समिति का गठन। यह अधिनियम संविधान में अनुच्छेद 243(जी) द्वारा एक नयी 11वीं सूची जोड़ता है, जिसमें 29 विषय हैं।[9] भारत में हालांकि पंचायतों का इतिहास बहुत पुराना है, परन्तु सही अर्थों में संविधान के 73वें संविधान सं शोधन ने मृतपाय पंचायतों को जीवन प्रदान किया है और सांविधानिक दर्जा दिये जाने से उनका अस्तित्व सुरक्षित हो गया है। इससे पंचायतों को न केवल प्रशासनिक अधिकार प्राप्त हुए हैं, बल्कि वित्तीय संसाधनों की गारन्टी भी प्राप्त हुई है, जो ग्रामीण विकास में महत्वपूर्ण भमिका निभाता है।[10]

निष्कर्षः– निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि सांस्कृतिक इकाई के रूप में गांव निर्माण को आइना बनाकर यदि हम याद करें, तब हमें अवगत होता है कि पंचायतें कैसे अस्तित्व में आई? जब किसी परिवार के सदस्यों का एक छत के नीचे साथ–साथ संकट में पड़ना या पड़ोसियों के बीच एक दूसरे के अस्तित्व में खलल डालने की मंशा से द्वंद्व पैदा हुआ अथवा साझी समृद्धि के कुछ सकारात्मक काम करते हुए इन तीन स्थितियों में ही पंचायतों की वास्तविक आवश्यकता महसूस हुई। जिन्होंने

ISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 2, Issue 02, May 2019

इन स्थितियों में नेतृत्व संभाला, जिन पर गांव ने भरोसा किया, वे पंच हो गये। उनसे सद् और सर्वकल्याणकारी बोध के साथ निर्णय का भरोसा था, अतः उन्हें ईश्वर यानी परमेश्वर माना गया। स्वानुशासन, प्रभुत्व का अभाव और सुशासन इन तीनों गुणों के साथ ही कोई पंच परमेश्वर का अपना दर्जा बनाये रख सका। यदि गौर किया जाये तो पंचायतें मूलरूप से कोई औपचारिक ईकाई नहीं थी। पारम्परिक पंचायतें एक जीवनशैली थी। संवाद, सहमति, सहयोग, सहभाग और सहकार की प्रक्रिया इस जीवनशैली के पांच सूत्र थे। क्या आज हमारी वर्तमान पंचायतें इन सूत्रों और उक्त गणो के साथ बनाई एवं चलायी जा रही है? यदि हम पंचायतों को सही मायने में लोकप्रतिनिधि ईकाई के रूप में देखना चाहते हैं, तो सबसे पहले हमें भारतीय संविधान के दस्तावेज से राज और सत्ता इन दो शब्दों और इनका आभास कराने वाले प्रावधानों को निकाल फेंकना होगा। राज की जगह लोक, और सत्ता की जगह प्रतिनिधि सभा का प्रयोग करना होगा। पंचायत प्रणाली को सुविधा से ज्यादा, सम्बंध सुधारने वाली सदविवेकी, स्वावलंबी व सर्वकल्याणकारी सांस्कृतिक प्रणाली के रूप में परिवर्तित करें। प्रणाली ऐसी हो, जिसमें ग्राम सभा की उपस्थिति अधिकतम तथा पंचायत की उपस्थिति न्यूनतम महसूस हो। ग्रामीण विकास के आर्थिक स्थिति अनुसार अंशदान तय करने का अधिकारी ग्राम सभा, पंचायत व प्रषासन का साझा हो। अनुदान राशि व सामग्री की मात्रा ग्राम योजना की आवष्यकतानुसार हो। वह सीधे ग्राम सभा के कोश में पहुँचे, इसके लिये ग्राम सभा को किसी के चक्कर न काटने पड़े। हर पिछले वर्ष के अनुपात में अगले वर्श बेहतर स्वावलम्बन, बेहतर स्वयं सहायता समूह गतिविधि, बेहतर षिक्षा, बेहतर कौषल विकास, सार्वजनिक रकबे व संसाधनों के बेहतर प्रबन्धन, बेहतर स्वच्छता, बेहतर स्वास्थ्य प्रदर्षन, बेहतर सड़क व रास्ते, बेहतर शौचालय व जैविक खेती का ज्यादा रकबा, ज्यादा जलसंचयन जैसे बिन्दुओं पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिये। हालांकि ग्रामीण विकास में पंचायतीराज व्यवस्था की महत्वपूर्ण भूमिका है किन्तु केन्द्र सरकार व राज्य सरकारों द्वारा ग्रामीण क्षेत्र के लिये चलायी जाने वाली योजनाओं का भी सही ढंग से क्रियान्वयन करना होगा। हम आशा करते हैं कि सहकारी योजनाओं के सही ढंग से क्रियान्वयन के माध्यम से पंचायत क्षेत्रों व्यवस्था द्वारा भारतीय ग्रामीण से पूर्ण विश्वास सम्भव होगा।

ISSN 2581-8996
ONLINE
THE INTERNATIONAL JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN MULTIDISCIPLINARY SCIENCES (IJARMS)
A BI-ANNUAL, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) JOURNAL
Vol. 2, Issue 02, May 2019

सन्दर्भ सूची

1. स्वप्निल सारस्वत (2003), भारतीय राजनीति और महिलायें, अक्षरांकन प्रकाशन, नोएडा (उ0प्र0)
2. स्वप्निल सारस्वत व डॉ0 निषान्त सिंह (2004), समाज, राजनीति और महिलायें (दशा और दिषा), राधा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली–110002
3. रिजवान खान और आभा आहूजा (2006), ''ग्रामीण विकास में पंचायतों की भूमिका'', कुरूक्षेत्र, अगस्त वर्ष 52, अंक 10, पृ0सं0 27–29
4. डॉ0 अनुराधा पाण्डेय (2010), महिला सशक्तिकरण, इशिका पब्लिशिंग हाउस, जयपुर–302018 (राजस्थान), पृ0सं0 30–34
5. डॉ0 दीपक पालीवाल व सरोज पालीपाल (2010), ''गांवों के सर्वांगीण विकास में पंचायतीराज की भूमिका, कुरूक्षेत्र, अक्टूबर, वर्ष 56, अंक 12, पृ0सं0 50–62''
6. डॉ0 अश्विनी (2011), ''ग्राम सभा का सशक्तिकरणः समस्यायें एवं समाधान'', योजना फरवरी, वर्ष 55, अंक 2, पृ0सं0 29–32
7. डॉ0 नीरजा शर्मा (2013), महिला सशक्तिकरण, महिला विकास कार्यक्रम, आस्था प्रकाशन, जयपुर–302003
8. संदीप सिंह (2013), ग्रामीण महिलायेंः योजनायें एवं विकास, ''ग्रामीण महिलाओं की आर्थिक सामाजिक व राजनीतिक दशा, इशिका पब्लिशिंग'' जयपुर–302018, राजस्थान पृ0सं0 53–95
9. अनीता मोदी (2014), ग्रामीण विकास और पंचायत कुरूक्षेत्र जनवरी वर्ष 60, अंक 03 पृ0सं0 8–12
10. अरूण तिवारी (2015), ''पंचायतीराज का अतीत से सीधे, कुरूक्षेत्र वर्ष 62 अंक 01 नवम्बर पृ0सं0 9–13''